इकाई 11 संगीत

इकाई की रूपरेखा

11.0 उद्देश्य

11.1 प्रस्तावना

11.2 भारतीय संगीत – षैलीगत वर्गीकरण

11.2.1 मार्ग और देषी संगीत

11.2.2 उत्तर भारतीय और कर्नाटक षैलियाँ

11.3 संगीत के अनिवार्य तत्व

11.3.1 स्वर

11.3.2 ताल

11.3.3 राग

11.4 संगीत : उद्भव और विकास

11.4.1 प्राचीन

11.4.2 मध्यकालीन

11.4.3 आधुनिक

11.5 सारांश

11.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

11.0 उद्देश्य

इस इकाई में हम संगीत का अध्ययन करेंगे जिसमें निम्नलिखित बिन्दुओं पर प्रकाष डाला जाएगाः

– संगीत की परिभाषा

– इसका ऐतिहासिक विकास

– भारतीय संगीत के अनिवार्य तत्व, और

– भारत में संगीत की विभिन्न षैलियां।

11.1 प्रस्तावना

भारत में संगीत की पुरानी और लम्बी परम्परा है। यहाँ के लोगों ने संगीत को हमेषा से अपने जीवन का हिस्सा बना कर रखा है। प्राचीन काल में लोगों की धार्मिक गतिविधियों के बीच संगीत का जन्म हुआ। ईष्वर की अराधना करते वक्त मत्रोंचारों और मंत्रों से संगीत की पहली किरण प्रस्फुटित हुई होगी। बाद में लोगों ने यह महसूस किया होगा कि मनुष्य के षरीर के विभिन्न भागों या पेट, हृदय, होंठ और सिर से विभिन्न प्रकार की ध्वनियाँ पैदा होती हैं और एक व्यवस्था बनती है। ध्वनियों में अनुपात और साम्य स्थापित करने की पद्धति श्रव्य और श्रुति के रूप में विकसित हुई। धीरे–धीरे संगीत के मापदंड स्थापित किए गए और गायन तथा वाद्य यंत्र के वादन के लिए नियम भी बनाए गए। इससे विभिन्न रागों का उदय हुआ और संगीत में राग के महत्व की स्थापना हुई। आगे आने वाले भागों में हम आपको भारतीय संगीत के विविध आयामों की जानकारी देंगे और इसके ऐतिहासिक विकास से भी आप परिचित हो सकेंगे। जैसा कि हम पहले आपको बता चुके हैं कि भारतीय संगीत एक पुरानी कला है। हजारों वर्षों से क्रम में इसका धीरे–धीरे विकास होता गया है। इसके सौन्दर्यात्मक और भौतिक गुणों को ठीक से समझने के लिए इस विकास को समझना जरूरी है।

11.2 भारतीय संगीत – शैलीगत वर्गीकरण

पर्यटन उद्योग से जुड़े होने के कारण आपको भारतीय संगीत की जानकारी अवष्य होनी चाहिए। यदि आप पर्यटन के पेषे से जीं भी जुड़े हुए हैं तो भी संगीत की जानकारी रखने से आपको भारतीय संस्कृति को जानने की एक दृष्टि मिल सकेगी।

प्राचीन संस्कृत ग्रंथों में संगीत की व्यापक परिभाषाएँ दी गई हैं। इनमें संगीत को गीतम, वाद्यम, नृत्यम, त्रयम, संगीत, मच्छयत कहा गया है। अर्थात संगीत राग, ध्वनि और नृत्य से मिलकर बना होता है।

यह सही है कि कला के ये तीनों रूप एक दूसरे से सम्बद्ध हैं हालांकि इन सभी का विकास स्वतंत्र रूप से हुआ है। इन तीनों में ध्वनि का समान रूप से महत्व है। अतः यह माना जाता है कि संगीत में ये तीनों षामिल हैं।

11.2.1 मार्ग और देशी संगीत

यह एक रोचक तथ्य है कि आरंभ से ही भारतीय संगीत दो समानांतर धाराओं में प्रवाहित होता रहा है। एक का संबंध धार्मिक समारोहों से रहा जबकि दूसरे का संबंध पर्वों त्यौहारों और इससे जुड़े सार्वजनिक मनोरंजन से रहा। पहले को मार्ग संगीत और दूसरे को देषी कहा गया।

यहाँ यह भी जान लेना चाहिए कि ये दोनों धाराएँ एक दूसरे से स्वतंत्र नहीं थी। इन दोनों का आधार लोक संगीत है। धार्मिक समारोहों पर कुछ खास लोगों को एकाधिकार होता चला गया और मार्ग धारा जनता से दूर होती चली गयी और बाद में इसे ही षास्त्रीय कहा गया। इसके विपरीत देषी धारा जनता के बीच फलती फूलती रही और भारत के सभी प्रदेषों में इसके कई रूप उभर कर सामने आए।

इस अंतर को और स्पष्ट करने के लिए आइये, हम आपको बता दें कि मार्ग संगीत गंगा या गोदावरी जैसी नदियों को षांत धाराओं के समान है। आज के संदर्भ में ध्रुपद्र और खयाल जैसी संगीतात्मक षैलियां मार्ग संगीत के रूप में जानी जाती हैं। देषी धारा उस पहाड़ी नदी के समान है जिसमें रवानगी है मस्ती है, अल्हड़ता है। यह संगीत जनता की रुचि से ही नियंत्रित और नियमित होता है। आज के जमाने के गजल और ठुमरी को देषी संगीत के अन्तर्गत रखा जा सकता है।

यह एक मानी हुई बात हे कि मार्ग और देषी संगीत षैलियां एक दूसरे से सम्बद्ध है। दोनों मूलतः लोक संगीत पर आधारित हैं। इस संगीत के परिष्कृत होने और समाज के संभ्रात वर्ग के इसके प्रति आकृष्ट होने से इसमें षास्त्रीयता का समावेष हुआ और मार्ग संगीत का निर्माण हुआ। इसका अपना व्याकरण निर्मित हुआ और इसमें गुरू षिष्य परम्परा की षुरूआत हुई। यह बात भी मानी जाती है कि षास्त्रीय रूप को जीवंत बनाए रखने के लिए संगीतकारों ने लगातार लोक संगीत से तत्व ग्रहण किया। राग और रागिनियाँ उनसे सम्बद्ध वाद्य यंत्र और यहाँ तक कि ललित कला के अन्य तत्व जैसे नृत्य भी सदा बहार लोक संगीत की ही देने है। हमें यह याद रखना चाहिए कि षास्त्रीय संगीत के विकास में लोक संगीत की निर्णायक भूमिका रही है। षास्त्रीय संगीत हमेषा लोक संगीत से जुड़ा रहा और वहां से ताजगी और नयापन ग्रहण करता रहा है। जब–जब षास्त्रीयता का संबंध लोक से टूटा है तब–तब षास्त्रीयता की धारा षुष्क और जड़ हो गई है। कुछ षास्त्रीय संगीतों का संबंध खास क्षेत्रीय षैलियों से माना जाता है, उदाहरण के लिए ध्रुपद संगीत के दौर में खयाल षैली को अर्धषास्त्रीय या अषास्त्रीय

संगीत माना जाता था। धीरे–धीरे नए तत्वों के ग्रहण करने और इसकी लोकप्रियता के कारण खयाल षुद्ध षास्त्रीय संगीत के रूप में उभरा। इसी प्रकार गजल, ठुमरी और दादरा ने भी धीरे–धीरे षास्त्रीय स्तर प्राप्त किया। आज सभी बड़े कलाकार इन्हें गाते हैं और इन षैलियों और उपषैलियों को भी षास्त्रीय संगीत में स्थान प्राप्त हो गया है। चैती, कजरी या रसिया जैसे लोक संगीतों को भी आज के ये बड़े संगीतकार गाते हैं और इन्हें भी षास्त्रीयता प्राप्त हो गई है। वस्तुतः यहां हम बताना चाहते हैं कि ललित कला का कोई भी रूप समाज से या लोक से कट कर जीवित नहीं रह सकता है। षास्त्रीयता को जीवन और स्पअन लोक से ही मिलता है। अतः जीवित रहने के लिए षास्त्रीय रूप हमेषा ही लोक रूप से अमृत रस ग्रहण करता रहता है। खमाज, खम्भावती, काफी, पीलू, माँद, मालवी या सारंग जैसे रागों को षास्त्रीय संगीत में षामिल करना इस बात का प्रमाण है कि षास्त्रीय संगीत समय–समय पर लोक संगीत को अपने भीतर समेटता रहता है।

ऊपर किए गए विचार से अगर आपने यह समझ लिया है कि मार्ग और देषी के बीच आदान प्रदान एकतरफा होता है तो आपको यह यह बता दें कि सच्चाई यह है कि यह प्रक्रिया दोनों तरफ से चलती रहती है। देषी संगीत भी मार्ग षैली में होने वाले परिवर्तनों से अछूता नहीं रह सकता। आदान प्रदान की यह प्रक्रिया अनवरत चलती रहती है। लोक संगीत भी षास्त्रीयता के तत्व ग्रहण करता रहता है ताकि यह आम जनता की बीच जीवित रह सके। संभवतः इसीलिए देषी संगीत का व्याकरण निर्मित करने का गंभीर प्रयास नहीं किया गया है। परन्तु हमें लोक षैलियों को इस मानदंड से नापने की कोषिष नहीं करनी चाहिए। भारतीय संगीत का लोक आधार और इसकी लोकप्रियता इसकी षक्ति है। (इकाई 13 खंड 4 में इस पर विस्तार से चर्चा की गई है) फिल्मी संगीत ने लोक और षास्त्रीय रूपों का एक सुन्दर समन्वय प्रस्तुत किया है।

11.2.2 उत्तर भारतीय और कर्नाटक शैलियाँ

विषय आधारित इस विभाजन के अलावा संगीत का एक और षैलीगत वर्गीकरण किया जाता है। षैलीगत विभिन्नता के आधार पर भारतीय संगीत को मुख्यतः दो भागों में बांटा जाता है – उत्तर भारतीय और कर्नाटक षैली। इन दोनों षैलियों का मुख्य अंतर स्थानीय विषेषताओं से प्रभावित है मतंग

मुनि द्वारा लिखित एक प्राचीन ग्रंथ बृहद देषी में भी क्षेत्रीय आधार पर उत्तर और दक्षिण (कर्नाटक) षैलियों का उल्लेख किया गया है। उत्तर भारतीय और कर्नाटक षैली के उद्गम को स्त्रोत एक ही है। क्षेत्रीय या स्थानीय प्रभाव के कारण इनमें अंतर आ गया है। संगीत के इतिहास पर एक सरसरी निगाह डालने परयह मालूम होता है कि 7वीं षताब्दी से क्षेत्र संबंधी विविधता सामने आने लगी थी। संगीत की मुख्य धारा इन नए स्थानीय या क्षेत्रीय तत्वों से प्रभावित होने लगी। 7 वीं और 13वीं षताब्दी के बीच भारतीय संगीत का सम्पर्क दूसरे देषों की संगीत षैलियों से भी हुआ। भारतीय संगीत परम्परा की समृद्धि की दृष्टि से इस युग का खास तौर पर महत्व है। भारतीय संगीत के ईरानी संगीत से सम्पर्क होने के कारण भी उत्तरी और कर्नाटक षैली का विकास अलग–अलग धाराओं में होता चला गया। सौराष्ट्र (गुजरात) के नरेष हरिपाल ने चौथी षताब्दी में लिखी पुस्तक संगीत सुधाकर में भारतीय संगीत की इन दो षैलियों का उल्लेख किया है।

अब हम आपको संगीत की दो षैलियों की खास और विभिन्न विषेषताओं से परिचित कराने जा रहे हैं। इन दोनों षैलियों में अपनाए जाने वाले रागों, श्रुतियों, ठाहों और वाद्यों के आधार पर इनमें अन्तर किया जाता है। कर्नाटक षैली में जहाँ श्रुतियों की षुद्धता पर बल दिया जाता है वहीं दूसरी ओर उत्तर भारतीय षैली में राग अलापने के समय श्रुतियां एक दूसरे में मिल जाती हैं। अपने षुद्ध रूप में कुछ स्वरों की सूक्ष्म ध्वनियों की रक्षा करना ही श्रुति की षुद्धता है। इस प्रथा के विपरीत उत्तर भारतीय या हिन्दुस्तानी संगीत में स्वरों की ऊंचाई या नीचाई की ओर ले जाया जाता है जिसे क्रमषः कोमल या तीव्र के नाम से जाना जाता है। नीचे दी गई तालिका में हम दोनों षैलियों में स्तरों के स्थान निर्धारण का तुलनात्मक विवरण प्रस्तुत करने जा रहे हैं।

क्र. सं.	उत्तर भारतीय / हिन्दुस्तानी	कर्नाटक / दक्षिण भारतीय
1)	शादाज	शादाज
2)	कोमल ऋषभ	शुद्ध ऋषभ
3)	शुद्ध या तीव्र ऋषभ	घटु श्रति ऋषभ (षुद्ध गा)

4)	कोमल गांधार	सामान्य गांधार
5)	शुद्ध या तीव्र गांधार	अन्तर गांधार
6)	शुद्ध या कोमल मध्यम	शुद्ध मध्यम
7)	तीव्र मध्यम	प्रति मध्यम
8)	पंचम	प्चम
9)	कोमल धैवत	षुद्ध धैवत
10)	शुद्ध या तीव्र धैवत	चतुश्रुति धैवत (षुद्ध नी)
11)	कोमल निषाद	कैषिक निषाद
12)	शुद्ध या तीव्र निषाद	काकलि निषाद

इन दोनों शैलियों में रागों के निर्माण को लेकर भी अन्तर है। कर्नाटक की शैली में स्वर की शुद्धता पर विशेष ध्यान दिया जाता है। हिन्दुस्तानी शैली में विभिन्न रागों को आपस में मिलाया जाता है। अतः कहीं–कहीं दोनों षैलियों के कुछ रागों के नाम एक समान हैं और कहीं–कहीं इनके रागों में अन्तर है।

इनकी सूची हम नीचे दे रहे हैं।

– राग : एक नाम परंतु गायन का अलग ढंग हिन्डोल, सोहनी, श्री

– गायन का एक ढंग परन्तु रागों के अलग अलग नाम

कर्नाटक	हिन्दुस्तानी
मोहनम	भोपाली
मालकौस	हिन्डौलम
दुर्गा	सोवरी

हिन्दुस्तानी षैली में ध्रुपद, खयाल, ठुमरी और तराना आदि गायन षैलियां हैं। कर्नाटक षैली में कीर्तनत, कृति, जावाली और तिलन्ना का प्रमुख स्थान है इसके अलावा कर्नाटक षैली में गायक स्वर और षब्द को समान महत्व देते हैं जबकि हिन्दुस्तानी षैली में षब्द की अपेक्षा स्वर का विषेष महत्व होता है। पिछली एक षताब्दी से ये दोनों षैलियां एक दूसरे के करीब आई हैं। दोनों ने कुछ सुधार के साथ एक दूसरे के रागों को अपनाया है। हिन्दुस्तानी गायकों ने हम्सध्वनि, श्रीरंजनी, आभोगी, किरवनी और सरस्वती जैसे कर्नाटक रागों को अपनाया है। स्वर्गीय उस्ताद अब्दुल करीम खाँ के प्रसिद्ध सरगम में कर्नाटक संगीत का प्रभाव स्पष्ट है।

इसी प्रकार गोपालकृष्ण ने वायलन में, स्वर्गीय बाल मुरली कृष्ण ने गायन में, उस्ताद अमजद अली खाँ ने सरोद में, उत्तर और कर्नाटक षैली का सुन्दर समन्वय किया है।

बोध प्रश्न 1

1) मार्ग और देषी संगीत का अन्तर स्पष्ट कीजिए।

____

____

2) निम्नलिखित में से प्रत्येक के चार प्रकार लिखिए।

हिन्दुस्तानी संगीत कर्नाटक संगीत

क) ——————————————————

ख) ——————————————————

ग) ——————————————————

घ) ——————————————————

3) कर्नाटक षैली में इन रागों को क्या कहा जाता है?

क) उपभोगी ————————————————————

ख) भूपति ————————————————————

ग) हिंडोलम ————————————————————

11.3 संगीत के अनिवार्य तत्व

पिछले भाग में हमने भारतीय संगीत परम्परा के विकास का अध्ययन किया। हमने भारतीय संगीत की दो षैलियों के विकास पर भी विचार किया। इस भाग में हम संगीत के कुछ अनिवार्य तत्वों की चर्चा करेंगे। आप यह जानते हैं कि काव्य वयन अपने आप संगीत में नहीं बदल जाता है।

वस्तुतः संगीत की अपनी कुछ विषेषताएं होती हैं जिसकी समझ हमें अवष्य होनी चाहिए।

निम्नलिखित तीन तत्वों के मिलन से संगीत का निर्माण होता है।

क) स्वर

ख) ताल/लय

ग) राग

ये संगीत के तीन आधारभूत तत्व हैं। इन पर हम अलग अलग उपभागों के अन्तर्गत विचार करेंगे।

11.3.1 स्वर

स्वर एक ऐसी ध्वनि है जिसका एक खास अर्थ होता है और जिसकी अलग पहचान होती है। स्वर जब एक लय और ताल में प्रकट होता है तब यह संगीत बन जाता है। भारतीय या पाष्चात्य सभी प्रकार के संगीत स्वरों पर आधारित हैं। इन स्वरों की बनावट अलग अलग संगीत रूपों में अलग अलग ढंगों से की जाती है। षड़ज भारतीय संगीत का आधार भूत स्वर है। इसे मूल स्वर के नाम से भी जाना जाता है। षड़ज का अर्थ होता है छः। इसका अर्थ यह है कि मूल स्वर का संबंध छह स्वरों से है। अतः भारतीय संगीत में सुरों अर्थात् सप्तक के आधार पर संगीत का निर्माण होता है।

भारतीय संगीत में पष्चिमी संगीत की तरह स्वरों का तान एक समान नहीं होता है। संगीतकार ही षड़ज के तान को निर्धारित करता है और तदनुसार अन्य छह स्वरों को संगीत में ढालता है। पष्चिमी संगीत में "एक तान" की अवधारण है। इसका अर्थ यह है कि विभिन्न स्वरों के लिए विषेष तान की जरूरत होती है। इस एक तान के आधार पर ही वाद्य यंत्रों का निर्माण होता है।

एक महत्वपूर्ण सवाल यह है कि स्वरों का निर्माण कैसे होता है? स्वरों के निर्माण की प्रक्रिया समझकर ही हम भारतीय संगीत ठीक तरह से समझ सकते हैं। श्रृति को एक खास तान पर ले जाने से स्वर का निर्माण होता है। आवाज को स्वर में बदलने के लिए दो विषेषताओं का होना जरूरी है।

- इसे श्रव्य होना चाहिए।
- इसमें प्रतिध्वनि होनी चाहिए।

भारतीय संगीत में असंख्य श्रुतियाँ हैं परन्तु किसी एक सप्तक में केवल बाईस श्रुतियाँ हो सकती है। (स्वरों की विषेष तान)

11.3.2 ताल

भारतीय संगीत में ताल का विषेष महत्व है। परम्परागत रूप से ताल भारतीय संगीत का अभिन्न अंग रहा हे। इसी के जरिए लय को संगीती में ढाला जाता है। संगीत के निर्धारतण में ताल की तीव्रता का भी महत्व होता है। जब ताल की गति धीमी होती है तो उसे विलम्बित कहते हैं। मध्यम गति से ताल को मध्यम और तीव्र से बढ़न वाले ताल को द्रुत कहते हैं। तालों की गति में मिश्रण करके भारतीय संगीत में अपार विविधता पैदा की गई है।

परम्परा से ताल संगीत के साथ जुड़ा हुआ है। मध्य काल तक आते आते इनकी कुल संख्या 1008 हो गई रागों के निर्माण में अधिकांषतः इन्ही तालों का उपयोग किया जाता है।

झांझ, मंजीरा, मृदंग, पखवज, तबला आदि वाद्य यंत्रों के जरिए ताल को अभिव्यक्त किया जाता है। इन ताल वाद्य यंत्रों को बजाने वाले कलाकार अपनी षब्दावली भी निर्मित कर लेते हैं। ठेका, बोल, गत, तुत्र,

तिहाई, पलटा आदि इनमें कुछ उल्लेखनीय हैं। उत्तरी भारत में तबला और दक्षिणी संगीत षैली में मृदंग का उपयोग किया जाता है और वहाँ भी इन्हीं षब्दावलियों का प्रयोग किया जाता है।

11.3.3 राग

राग भारतीय संगीत का तीसरा प्रमुख तत्व है। जहाँ पाष्चात्य संगीत अपनी धुन के लिए प्रसिद्ध है, वहीं भारतीय संगीत अपने राग के लिए जाना जाता है। यह एक रोचक तथ्य है कि राग केवल भारत तक ही सीमित नहीं है बल्कि ईरान, अरब, अफगानिस्तान, चीन आदि की संगीत परम्परा में भी मौजूद है।

आह्लादकता राग का मूल तत्व है। आह्लाद से असंपृकत ध्वनियों को हम राग नहीं कहेंगे। आह्लादकता के अलावा राग के लिए अन्य दस विषेषताओं की जरूरत होती है। इन विषेषताओं के संयोजन से ही राग का निर्माण होता है। राग की एक विषेषता यह भी होती है कि इसे पूरी भावनात्मकता और तन्मयता के साथ गया जाता है। भारतीय संगीत में यह माना जाता है कि ऐन्द्रिकता से च्युत राग यांत्रिक हो जाता है। विभिन्न भावों के मिलने से राग और रागनियों को जन्म होता है। आपके लिए यह जानना भी उपयोगी होगा कि भारत में चित्रकला की प्रसिद्ध रागमाला श्रृंखला में राग रागिनियों के विविध भावों को ही चित्रांकित किया गया है।

बोध प्रश्न 2

1) श्रुति के स्वर बनने के लिए किन किन विषेषताओं की अपेक्षा होती है?

_____

_____

2) चार ताल वाद्य यंत्रों का नाम लिखिए।

_____

_____

11.4 संगीत : उद्भव और विकास

संगीत हमेषा से ही संस्कृति का साथी रहा है। संस्कृति में होने वाले उतार चढ़ाव के साथ साथ संगीत में भी लगभग समान उतार चढ़ाव हुए हैं। अतः आरंभिक काल में संगीत के स्वरों, वाद्य यंत्रों और कुछ हद तक नृत्यों का भी विकास हुआ है। जैसा कि हम जानते हैं कि षास्त्रीय रूप से पहले लोक संगीत का जन्म हो चुका था। इस भाग में हम भारतीय संगीत के ऐतिहासिक विकास का वर्णन करेंगे।

11.4.1 प्राचीन

भारत की प्रथम सम्यता अर्थात् हड़प्पा संस्कृति के संगीत के बारे में हमें बहुत कम मालू है। वैदिक संस्कृति में संगीत का काफी उल्लेख मिलता है। वैदिक काल में संगीत के तीनों प्रकार – गायन, वाद्य और नृत्य – विकसित अवस्था में मौजूद थे। वैदिक मंत्रों का उच्चारण वस्तुतः संगीत का ही एक अभ्यास था। ऋगवेद में इस संदर्भ में कुछ संकेत मिलता है। जिनकी जानकारी आपके लिए लाभदायक सिद्ध हो सकती है।

गीतों के प्रकार

– गीत
– गातु
– गाथा
– गायन
– गीति
– साम; आदि।

वाद्य यंत्रों के प्रकार

– वीणा
– वाण
– तुन्च
– दुंदुभी

– वेणु

– कर्कति

– गरगर

– पिंग; आदि

यहां आपको हम यह बता देना चाहते हैं कि वैदिक काल के अन्त तक संगीत से संबंधित कोई ग्रंथ या पुस्तक प्राप्त नहीं होती है। वैदिक काल के बाद संगीत का विकास तेजी से होता है। समाज में संगीत की परम्परा स्थापित होने लगती है और इस परिष्कार के क्रम में षास्त्रीय संगीत का जन्म होता है। ऐतिहासिक प्रमाण के रूप में गुप्त काल के प्रसिद्ध स्वर्ण मुद्रा का उल्लेख कर सकते हैं। इस मुद्रा में एक तरफ समुद्र गुप्त को वीण बजाते हुए दिखाया गया है। इसी युग में भरत मुनि ने नाट्य षास्त्र की रचना की।

इस काल के भारतीय संगीत ने पूर्वी और दक्षिणी एषियाकी संस्कृतियों को प्रभावित किया। रामायण आधारित इन्डोनेषियाई नृत्य भारतीय संगीत परम्परा से सीध प्रभावित हैं।

11.4.2 मध्यकालीन

मध्यकाल में संगीत के बारे में सबसे कम लिखा गया। दिल्ली सल्तनत में संगीत की मौजूदगी और विकास की थोड़ी बहुत सूचना अमीर खुसरों की रचनाओं से मिलती है। क्षेत्रीय राजवंषों में भी यही स्थिति थी। ऐतिहासिक प्रमाण नागण्य हैं और कई बार इतिहास और कथा को अलग करना मुष्किल है। अतः इतिहास से जो थोड़ी बहुत सूचना हमें मिली है उसी के आधार पर हम आगे बढ़ रहे हैं।

मध्यकाल की सबसे पहली संगीत पुस्तक संगीत रत्नाकर है। यह पुस्तक अनुपलब्ध है परन्तु आज भी संगीतकार इसका उल्लेख करते हैं। इसकी रचना देव गिरि के यादव षासक के दरबार में श्रोग देव ने 1210–47 में की थी संगीत रत्नाकर में गायन और वाद्य संगीत के साथ–साथ समकालीन नृत्य रूपों का भी उल्लेख हुआ है। इसमें 264 रागों को विभिन्न वर्गों और उपवर्गों में वर्गीकृत किया गया है। हालांकि इस वर्गीकरण का आधार पूर्ववत रहा है। इस ग्रंथ की सबसे बड़ी विषेषता यह है कि इसमें पहली बार संगीत के विभिन्न तत्वों को विधिवत वर्णित किया गया है। विजय नगर के राजा मल्लिकार्जुन

(1446–65) के दरबारी कालिनाथ ने श्रृग देव के संगीत रत्नाकर पर संस्कृत में एक टीका लिखी है। इसी प्रकार केषव और सिंह भूपल ने भी इसी प्रकार की संस्कृत टीका लिखी है लेकिन इसकी तिथि और स्थान का कुछ पता नहीं है।

15वीं षताब्दी में गुजरात में संगीत के दो महत्वपूर्ण ग्रंथ प्राप्त हुए हैं। पहले ग्रंथ का नाम संगीत सुधाकर है जिसके साथ सौराष्ट्र के राजा हरिपन देव का नाम जुड़ा हुआ है। इसमें सबसे पहले भारतीय संगीत को हुन्दुस्तानी और कर्नाटक षैलियों में विभाजित किया गया है। दूसरा ग्रंथ फारसी भाषा में लिखित गुनयात उल मुन्या है, जिसका अर्थ है "इच्छा का सुख"। दुर्भाग्यवष यह ग्रंथ अधूरा है और इसका प्रथम पृष्ठ तथा अंतिम चार उपभाग अनुपलब्ध है। इसी में लेखक का भी नाम षामिल होगा जो हमेषा के लिए खो गया है। हमें केवल इतना ही मालूम है कि फिरोज तुगलक के षासन काल में गुजरात प्रांत के राज्यपाल मलिक षमषुद्दीन अबुराजा के प्रयत्न से इस ग्रंथ की रचना हुई थी। गुनयात में लेखक का कथन है कि इसकी रचना संभ्रात जनों, मुतबिरान (अधिकारियों) और माआरिफ (विषेषज्ञों) को संगीत का ज्ञान देने के लिए की गई है। (गुनयात उल मुल्या : द अर्लिएस्ट नोन पर्सियन वर्क इन इंडियन म्युजिक, संपालन षहाब सरमदी, एषिया पब्लिषिंग हाउस, नई दिल्ली 1978)।

कई मामले में इस पुस्तक का विषेष महत्व है। इसमें संगीत के फारसी और संस्कृत ग्रंथों पर टिप्पणी की गई है। इसके अलावा गुनयात में लुप्त हो गई कई पुस्तकों का भी हवाला दिया गया है।

15वीं षताब्दी में लोचन कवि लिखित राग तरंगिनी भी इस युग का एक महत्वपूर्ण ग्रंथ है। इसमें जयदेव (गीत गोविंद) और विद्यापति का संदर्भ दिया गया है अतः इसे 15वीं षताब्दी की रचना माना जा सकता है। राग तरंगिनी में पहली बार राग के विभाजन की वैकल्पिक व्यवस्था–थाट–का प्रावधान किया गया। इसमें वर्णित संगीत के सभी प्रकार आज प्रचलित हैं।

15वीं षताब्दी के उत्तरार्द्ध में जौनपुर के षर्की षासकों के संरक्षण में संगीत का विकास हुआ। सुल्तान हुसैन षर्की (1458–99) स्वयं एक संगीत विषेषज्ञ और पारखी था जिसने ख्याल और कलावंती खयाल के गायन को एक नया रूप प्रदान किया। उसने जौनपुर तोड़ी, सिंधु भैरवी, सिंदूर और रसूली तोड़ी रागों का आविष्कार किया।

हमने पहले भी बताया कि विजयनगर के प्रमुख राजाओं के दरबार में संगीत को काफी बढ़ावा मिला। दक्षिण भारतीय षैली के एक प्रणेता रामआमत्य ने इस षैली कोा वर्णन करते हुए स्वरमेल कलानिधि की रचना की। यह अपने ढंग का एक प्रामाणिक ग्रंथ है और आज भी संगीत प्रेमी इसका हवाला देते हैं।

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि 13वीं – 15वीं षताब्यिों के दौरान अनेक स्थानों पर संगीत का अलग–अलग और छिटपुट ढंग से विकास होता रहा। इन्हें समन्वित–संयोजित करने और एक साथ लाने का कोई प्रयास नहीं किया गया। मुगलों ने संगीत के क्षेत्र में हस्तक्षेप किया और उनके युग में यह ऊंचाइयों तक पहुंच गया।

जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है इस समय क्षेत्रीय राज्यों में संगीत का विकास हो रहा था। दक्षिण में 16वीं षताब्दी के मध्य के आसपास जनक और जन्य रागों की व्यवस्था षुरू हुई। स्वरमेल कलानिधि में इस व्यवस्था का सर्वप्रथम उल्लेख हुआ है। इसकी रचना 1550 ई. में कोंदबिदु (आंध्रप्रदेष) के राआमात्य ने की। इसमें 20 जनक और 64 जन्य रागों का उल्लेख है। बाद में 1609 ई. में सोमनाथ ने रागविबोध की रचना की इसमें उन्होंने उत्तर भारतीय षैली की कुछ अवधारणाओं को भी ग्रहण किया। 17वीं षताब्दी में तंजाउर के वेंकटमाखिन (लगभग 1650) ने चतुर्दड़ी प्रदासिका नाम प्रसिद्ध संगीत ग्रंथ की रचना की। इस ग्रंथ में वर्णित व्यवस्था कर्नाटक संगीत व्यवस्था का आधार बनी।

उत्तर भारत का संगीत अधिकांषतः भक्ति साहित्य से प्रेरित, प्रभावित और संचालित था। 16वीं – 17वीं षताब्दी के संत कवियों की रचना कमोबेष संगीत पर आधारित थी। वृंदावन में, स्वामी हरिदास ने संगीत को खूब आगे बढ़ाया। ऐसा माना जाता है कि अकबर के दरबार के प्रसिद्ध संगीतज्ञ तानसेन के गुरू थे। तानसेन स्वयं उत्तर भारतीय संगीत का महान गायक था। उन्हें मियां की मल्हार, मियां की तोड़ी और दरबारी जैसे प्रसिद्ध रागों का जम्नदाता माना जाता है। ग्वियर के राजा मानसिंह (1486–1517) ने उत्तर भारतीय संगीत की एक प्रसिद्ध षैली ध्रुपद के विकास और परिष्कार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

18वीं षताब्दी में, मुगल बादषाह मुहम्मद षाह के दरबार में उत्तर भारतीय षैली को खूब प्रोत्साहन मिला। उनके दरबार में सदारंग और अदारंग खयाल गायिक के सिद्धदस्त गायक थे। उनके समय में ही

तराना, दादरा और गजल जैसे संगीत रूपों का जन्म हुआ। इसके अलावा इस समय दरबारी संगीत का भी समावेष हुआ है। इसमें ठुमरी औ टप्पा प्रमुख है। ठुमरी लोक धुन पर आधारित है और टप्पा पंजाब के ऊंट चालकों द्वारा गाया जाने वाला गीत है।

ध्यातत्य है कि दक्षिण में संगीत के नियम कठोर रहे जबकि उत्तर भारत में इसके अभाव के कारण संगीत ज्यादा उन्मुक्त रहा। उत्तर षैली में रागों का मिश्रण कर कई प्रकार के प्रयोग किए जाते रहे हैं। आज भी उत्तर भारतीय षैली का संगीत उन्मुक्त और स्वच्छंद है।

11.4.3 आधुनिक

19वीं षताब्दी के अंत और 20वीं षताब्दी के आरंभ में भारतीय संगीत, खासकर षास्त्रीय संगीत, पुनर्जीवित हुआ। इसका श्रेय पंडित विष्णु दिगंबर पलुस्कर और पंडित विष्णु नारायण भातखंडे को जाता है। इन दोनों ने घूम घुमकर जनता में संगीत विषय की चेतना को जगाया। उन्होंने खूब लिख और लोगों को भारतीय संगीत की परंपरा से अवगत कराया। इस प्रकार के लोग भारतीय षास्त्रीय संगीत की ओर आकषिर्त हुए।

इसी समय विभिन्न घराने संगीत की परंपरा को जीवित रखने का प्रयत्न कर रहे थे। इनमें उस्ताद अलाउद्दीन खां का नाम उल्लेखनीय है जो मध्यप्रदेष के छोटे से राज्य मयूयहर में संगीत की लौ को जलाए रखने का प्रयत्न कर रहे थे। उन्होंने भारतीय संगीत को उस्ताद अली अकबर खाँ (सरोद) और पंडित रवि षंकर (सितार) जैसे वियष्वविख्यात कलाकार दिए। षास्त्रीय परंपरा को पुनर्जीवित करने में इन घरानों का योगदान अमूल्य है। नीचे हम कुछ घरानों और उनके प्रमुख कलाकारों का नाम दे रहे हैं।

सं.	घराने का नाम	विख्यात कलाकार	विधा
1)	अतरौली क्रम –आगरा	उस्ताद फयाज खाँ उस्ताद षराफत खाँ	गायकी गायकी
2)	किराना	उस्ताद अब्दुल कराम खाँ	गायकी

		पंडित भीमसेन जोषी उस्ताद सादिक अली खाँ	गायकी गायकी
3)	जयपुर	पंडित मलिकार्जुन मंसूर	गायकी
4)	सेनिआ	उस्ताद अली अकबर खाँ पंडित रवि षंकर	सरोद सितार
5)	पटियाला	उस्ताद बड़े गुलाम अली खाँ	गायकी

कुछ अन्य प्रमुख संगीतज्ञों का नाम नीचे दिया जा रहा है।

1)	उस्ताद अमीर खाँ	गायकी
2)	पंडित जसराज	गायकी
3)	उस्ताद अमजली अली	सरोद
4)	श्री निखिल बनर्जी	सितार
5)	उस्ताद असद अली खाँ	विचित्र वीणा
6)	पंडित बाल मुरली कृष्ण	गायकी
7)	श्री टी.वी. महालिंगम	मुरली
8)	श्री विलायत खाँ	थ्सतार
9)	पंडित राजन मिश्र	गायकी
10)	पंडित साजन मिश्र	गायकी

बोध प्रश्न 3

1) वैदिक युग के संगीत पर चार पंक्तियाँ लिखिए।

____

———————————————————————————————————————

2) "क" और "ख" का मिलान कीजिए।

क	ख
1) गीर	क) वाद्य यंत्र
2) वेणु	ख) वाद्य यंत्र
3) वीणा	ग) गीत
4) गरगर	घ) वाद्य यंत्र
5) गाथा	ड.) गीत

3) निम्नलिखित संगीतज्ञ कौन सा वाद्य बजाते हैं?

क) पंडित रवि षंकर ———————————————————————

ख) उस्ताद आमजद अली ———————————————————————

ग) श्री टी. वी. महालिंगम ———————————————————————

घ) उस्ताद असद अली ———————————————————————

11.5 सारांश

इस इकाई में हमने निम्नखिखित मुद्दों पर विचार कियाः

– भारत की संगीत परंपरा का आरंभ ईसा के 200 वर्ष पूर्व से ही हो जाता है।

– भारतीय संगीत की दो षैलियाँ हैं – उत्तर भारतीय और कर्नाटक षैली

– स्वर, ताल और राग संगीत के अनिवार्य तत्व हैं। भारतीय षास्त्रीय संगीत में सात स्वर हैं। षडज स्थाई स्वर है। अन्य सभी स्वरों को संबंध षडज से होता है।

– विभिन्न परंपरागत परिवारों या घरानों के संरक्षण में आज भारतीय षास्त्रीय संगीत फल फूल रहा है।

11.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) देखिए उपभाग 11.2.1

2) क) घ्रुपद कीर्तनम

ख) खयला कृति

ग) ठुमरी जावली

घ) तराना तिल्लना

3) क) अभोगी

ख) मोहनम

ग) मालकौंस

बोध प्रश्न 2

1) श्रव्य होना चाहिए।

प्रतिध्वनि होनी चाहिए।

मंजीरा, मृदंग, पखावज, तबला

बोध प्रश्न 3

1) देखिए उपभाग 11.4.1

2) 1) ग

2) क

3) ख

4) घ

5) ग

3) क) सितार

ख) सरोद

ग) मुरली

घ) विचित्र वीणा

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY